



DAILY NEWS BULLETIN

LEADING HEALTH, POPULATION AND FAMILY WELFARE STORIES OF THE DAY
Friday 20191004

डेंगू

बैक्टीरिया की मदद से दिल्ली में खत्म होगा डेंगू! (Navbharat Times: 20191004)

<http://epaper.navbharattimes.com/details/64057-59506-2.html>

ब्राजील का तरीका अपनाएने की तैयारी, फिलहाल हो रही रिसर्च

इसी प्रकार अगर केवल नर मच्छरों को इस बैक्टीरिया से संक्रमित कर दिया जाए तो उससे अंडा ही डेवलप नहीं होगा

डेंगू फैलाने वाले एडीस मच्छरों में से अगर केवल एडीस मादा मच्छरों को इस बैक्टीरिया से संक्रमित कर दिया जाए तो उससे पैदा होने वाले नए मच्छर में भी डेंगू वायरस फैलाने की क्षमता नहीं होगी

मच्छरों के नर व मादा दोनों को वॉलबेचिया बैक्टीरिया से संक्रमित करने पर उससे पैदा होने वाले नए एडिस मच्छर में डेंगू वायरस नहीं आएगा और इससे दूसरे इंसानों में वायरस भी नहीं पहुंचा पाएगा

डेंगू से बचाव के लिए ब्राजील में अपनाया जाने वाला एक तरीका दिल्ली में भी अपनाया जा सकता है। फिलहाल पुडुचेरी स्थित वेक्टर कंट्रोल रिसर्च सेंटर (VCRC) के लैब में इसे लेकर रिसर्च चल रही है। इसके तहत एक खास प्रकार के वॉलबेचिया (Wolbachia) बैक्टीरिया की मदद से एडिस मच्छरों में डेंगू वायरस फैलाने की क्षमता को ही खत्म कर दिया जा रहा है। डॉक्टरों का मानना है कि मच्छरों में बायोलॉजिकल बदलाव कर डेंगू को कंट्रोल करने की संभावना है।

डॉक्टर डी के दास के अनुसार वॉलबेकिया पर विशाखापटनम में भी स्टडी चल रही है। अभी यह शुरुआती स्टेज में है। आने वाले दिनों में यह साफ हो जाएगा कि यह तरीका भारत और दिल्ली के लिए कितना कारगर है। दास का यह भी कहना है कि मच्छर को खत्म करना संभव नहीं है। इसलिए डेंगू को कंट्रोल करने के लिए मच्छरों में बायोलॉजिकल बदलाव कर ही लोगों को इस बीमारी से बचाया जा सकता है। इसलिए इसके अल्टरनेटिव तरीके पर पूरी दुनिया में रिसर्च शुरू हो चुकी है। इनमें से एक वॉलबेकिया बैक्टीरिया है।

दास ने कहा कि यह बैक्टीरिया इंसानों के लिए खतरनाक नहीं है। लेकिन यह बैक्टीरिया मच्छरों के अंदर इस प्रकार का एंटीबॉडी बनाता है कि उनमें डेंगू वायरस फैलाने की क्षमता ही खत्म हो जाती है। यह तरीका बिल्कुल अलग है। इसमें एडिस मच्छर का बायोलॉजिकल बदलाव किया जाता है। इसके लिए सबसे पहले कुछ मच्छरों में वॉलबेकिया बैक्टीरिया डाल दिया जाता है। जब यह बैक्टीरिया बढ़ने लगता है तो इन्हें बाहर छोड़ दिया जाता है। इसमें नर और मादा मच्छर दोनों को इस प्रोसेस से गुजारा जाता है, जिससे इन मच्छरों का इम्यून सिस्टम स्ट्रांग हो जाता है, जिससे डेंगू वायरस का प्रभाव नहीं होता है और वह इससे संक्रमित नहीं होता है। अब ऐसे मच्छरों के री-प्रोडक्शन से पैदा होने वाले नए मच्छर भी इसी तरह से होते हैं। धीरे-धीरे इनकी संख्या बढ़ती जाएगी और नए मच्छर डेंगू वायरस फ्री हो जाएंगे।

आईएमए के पूर्व प्रेसिडेंट डॉक्टर के के अग्रवाल का कहना है कि भारत जैसे विशाल देश के लिए यह तरीका कितना कारगर होगा, यह रिसर्च के बाद ही पता चलेगा। लेकिन निश्चित रूप से बायोलॉजिकल बदलाव का यह तरीका डेंगू को कम करने में कारगर साबित हो सकता है। वहीं, गंगाराम अस्पताल के डॉक्टर अतुल गोगिया का भी यही कहना है कि यह बिल्कुल ही नया तरीका है। इस दिशा में सोचना और इस पर बड़े स्तर पर स्टडी की जरूरत है। अभी छोटे स्तर पर स्टडी चल रही है, जिससे उम्मीद बढ़ी है।

चूहे ने उनके दोनों पैर कुतर डाले और एहसास तक नहीं हुआ

लंबे समय से डायबिटीज का मरीज होने की वजह से 52 साल के शख्स के पैरों में संसेशन खत्म हो गई थी

चेहर से ज्यादा पैरों का ध्यान रखें ऐसे मरीज

Rahul.Anand@timesgroup.com

■ नई दिल्ली : डायबिटीज से पीड़ित एक मरीज के दोनों पैर चूहे ने कुतर दिए। उन्हें समझ में नहीं आ रहा था कि यह कैसे संभव है कि चूहा पैर कुतर कर चला गया और उन्हें एहसास तक नहीं हुआ। 52 साल के इस शख्स ने पहली बार जब अपने पैर से खून निकलते देखा तो उसे कुछ समझ में नहीं आया, उसने डॉक्टर को भी दिखाया। लेकिन डॉक्टर ने चोट लगने की बात कह कर टाल दिया। लेकिन आगे दिन जब फिर उसके दूसरे पैर में भी उसी तरह का जख्म बन गया और खून निकलने लगा तो वह डर गया। इस बार वह अपने अपने

डायबिटीज के डॉक्टर ए के शिंगन के पास पहुंचा, तो डॉक्टर ने देखते ही बता दिया कि उसके पैर चूहे ने कुतरे हैं।

डॉक्टर का कहना है कि जब कोई लंबे समय से डायबिटीज का मरीज होता है तो वह न्यूरोपैथी का शिकार हो जाता है, जिससे पैरों में संसेशन खत्म हो जाती है। उन्हें किसी भी प्रकार की चुभन, चोट या जलने तक का एहसास नहीं होता। मरीज को अब एंटी बैक्टीरियल के साथ सायटोटनिस का इंजेक्शन दिया गया है और शूगर लेवल कंट्रोल करने की दवा दी जा रही है। उन्होंने बताया कि लंबे समय से डायबिटीज है और न्यूरोपैथी भी।

डॉक्टर शिंगन ने बताया कि इससे पहले भी उनके पास चूहे द्वारा पैर कुतरने के मामले आए हैं। दरअसल, जब शूगर लेवल बढ़ जाता है और मरीज रात में सोता है तो पैर के हिस्से में शूगर जमा होने

लगाती है, शूगर की महक चींटी और चूहे को दूर से ही पता चल जाती है। ऐसे मरीजों के पैर पहले से ही सुन्न रहते हैं, उसमें कोई संवेदना नहीं होती। इसलिए किसी प्रकार के जख्म, चोट, आग या चुभन का उन्हें एहसास नहीं होता। डॉक्टर शिंगन ने बताया कि कई मरीज तो ऐसे होते हैं कि शूगर लेवल हाई होने की वजह से उनके पैर में चींटी लगी रहती है और उन्हें पता तक नहीं चलता। इसलिए जरूरी है कि मरीज अपना शूगर लेवल कंट्रोल में रखें और इससे बचाव पर ध्यान दें।

जरूरी है कि मरीज अपना शूगर लेवल कंट्रोल में रखें

न्यूरोपैथी की चपेट में आ जाते हैं

■ जब कोई लंबे समय से डायबिटीज का मरीज होता है तो वह न्यूरोपैथी का शिकार हो जाता है, जिससे पैरों में संसेशन खत्म हो जाती है।

■ दर्द की संवेदना जब खत्म हो जाती है तो डायबिटीक फुट या अल्सर होने का खतरा बढ़ जाता है।



मरीज को अब एंटी बैक्टीरियल के साथ-साथ टिटनस का इंजेक्शन दिया गया है। शूगर लेवल कंट्रोल करने की दवा भी।

दर्द की संवेदना जब खत्म हो जाती है तो डायबिटीक फुट या अल्सर होने का खतरा बढ़ जाता है। न्यूरोपैथी वाले मरीजों को अपने डॉक्टर से नियमित जांच जरूर करवानी चाहिए। जुराबे उतारकर जांच कराएं। डॉक्टर को सलाह है कि अपने जूतों को दिन में दो बार जांच कर यह निश्चित करें कि जूते के अंदर कोई नुकुरीली चीज न हो, जो जख्म बना दे। ऐसे जूते-मोजे पहनें जो फिट हों। कभी नंगे पांव नहीं चलें। पांव को साफ रखें। डायबिटीज के मरीजों को अपने चेहरे से ज्यादा पैरों का ध्यान रखना चाहिए।



Lupus (Dainik Jagran: 20191004)

http://epaper.livehindustan.com/imageview_291331_71816346_4_1_04-10-2019_5_i_1_sf.html

ल्यूपस रोग पर शोध कर रहा एम्स

नई दिल्ली | वरिष्ठ संवाददाता

शरीर की बीमारियों से लड़ने की क्षमता जब खुद स्वस्थ कोशिकाओं पर हमला कर दे तो ऑटो इम्यून बीमारी ल्यूपस हो सकती है। एम्स में पहली बार इस बीमारी के तीन हजार मरीजों पर शोध किया जा रहा है कि इसका इलाज मरीजों पर केतना कारगर है।

शोध में यह पता लगाने की कोशिश की जाएगी कि इस बीमारी में विटामिन डी का मरीजों पर क्या असर पड़ता है। इस बीमारी को इलाज से नियंत्रण में लाया जा सकता है, लेकिन इसे पूरी तरह ठीक नहीं किया जा सकता। र्मेटोलॉजी विभाग के असिस्टेंट प्रोफेसर डॉक्टर रंजन गुप्ता ने बताया कि इस बीमारी पर इलाज का असर पता करने के लिए केंद्र सरकार के डिपार्टमेंट ऑफ बायोटैक्नोलॉजी से लगभग एक करोड़ रुपये का अनुदान मिला है। उन्होंने कहा कि एम्स के अलावा आठ



45 से कम उम्र के लोगों को अधिक खतरा

9 गुना अधिक पाई जाती है महिलाओं में बीमारी पुरुषों के मुकाबले

क्या है यह बीमारी

यह एक ऑटो इम्यून बीमारी है, जिसमें शरीर की बीमारियों से लड़ने की क्षमता खुद स्वस्थ कोशिकाओं पर हमला करती है। यह रोग दिल, किडनी, फेफड़े और मस्तिष्क को प्रभावित करता है। इसके कारण जान भी जा सकती है। इसका अभी तक कोई प्रभावी इलाज सामने नहीं आया है। हालांकि, समय पर इसके लक्षणों की पहचान कर इलाज से कम या नियंत्रित किया जा सकता है। त्वचा पर चकत्ते पड़ना, थकान, बाल उड़ना इस बीमारी के लक्षण हैं। यह महिलाओं में अधिक होती है।

अन्य संस्थानों में भी इसी बीमारी पर शोध किया जाएगा।

हेल्पलाइन पर कॉल कर शोध में शामिल हो सकते हैं: डॉक्टर रंजन गुप्ता ने बताया कि वे इस रोग से पीड़ित करीब 3000 मरीजों पर शोध करेंगे। उन्होंने

बताया कि एम्स की तरफ से व्हाट्सएप और ई-मेल जारी किया गया है। लोग 07303061991 नंबर पर वाट्सएप और sleaiims@gmail.com के जरिए ल्यूपस बीमारी पर हो रहे शोध में शामिल हो सकते हैं।

Vaccination (Hindustan: 20191004)

http://epaper.livehindustan.com/imageview_291345_72389020_4_1_04-10-2019_15_i_1_sf.html

बड़ी उम्र में टीकाकरण को लेकर न सिर्फ मरीजों में, बल्कि चिकित्सकों में भी जानकारी का अभाव है। ज्यादातर लोग सोचते हैं कि बड़ी उम्र में टीके लगवाने की क्या जरूरत है? यह सोच सही नहीं है। बड़ों के लिए भी टीकाकरण जरूरी है। इस बारे में विस्तार से बता रही हैं **इंदिरा राठौर**



बड़ों को भी चाहिए टीके की खुराक

इस उम्र में टीके?... बड़ी उम्र में टीकाकरण (वैक्सिन्स) की बात पर ज्यादातर लोगों की पहली प्रतिक्रिया यही होती है। अचानक कोई संक्रमण घेरे, जो लंबे समय तक ठीक न हो और डॉक्टर सलाह दे कि हमें किसी खास टीके की जरूरत है तो हैरत होने लगती है। दिल्ली के वसंत कुंज के फोर्टिस हॉस्पिटल में पल्मोनोलॉजी विभाग के निदेशक डॉ. विवेक नांगिया कहते हैं, 'बड़ों में टीकाकरण के बारे में मरीजों में ही नहीं डॉक्टरों में भी जानकारी का अभाव है। आमतौर पर ज्यादातर टीके बचपन में लगा दिए जाते हैं। एक उम्र के बाद उनकी जरूरत नहीं रहती। जैसे पोलियो का टीका 5 वर्ष की उम्र के बाद देने की जरूरत नहीं होती। पर, टिटनेस और डिप्थीरिया का टीका कभी भी लगवाना चाहिए। इसी तरह गंभीर रोगों जैसे किडनी-फेल हो जाने, अस्थमा, एड्स, हृदयरोग, कैंसर...आदि से जुड़ा रहे वयस्कों में भी कुछ टीकों की जरूरत होती है।'

गुरुग्राम के कोलंबिया एशिया हॉस्पिटल के इंटरनल मेडिसिन विभाग के डॉ. मंजीता नाथ दास कहते हैं, 'बड़ों के लिए भी कई नए टीके बन चुके हैं। निमोनिया वैक्सिन ऐसा ही एक टीका है। टीकाकरण का मतलब यह नहीं है कि वह समस्या होगी ही नहीं। पर उसका नुकसान कम हो जाता है। चिकन पॉक्स या मम्स के टीके बचपन में नहीं लगे हैं तो बड़े होने पर लगवा सकते हैं।' पारस हॉस्पिटल, गुरुग्राम के इंटरनल मेडिसिन के डॉ. पी. वैकट कहते हैं, 'कई माता-पिता बच्चों में मम्स, मीजल्स या कफ-कोल्ड जैसे संक्रमणों के लिए टीकाकरण जरूरी नहीं समझते। पर ये टीके जरूरी हैं। बड़े होने के बाद भी इन्हें लगवाना चाहिए। ग्रीह उम्र में शरीर को इन संक्रमणों को झेलना मुश्किल होता है।'

धारणा: हम स्वस्थ हैं तो वैक्सिन की जरूरत क्यों?
सच्चाई: उम्र के साथ हर व्यक्ति की रोग-प्रतिरोधक क्षमता कम होती है। टीके कई संक्रमणों से बचाते हैं।
धारणा: टीका लगवाने से बेहतर है कि प्राकृतिक रूप से बचाव करें?
सच्चाई: आज की जीवनशैली में कई संक्रमणों से खुद को बचा पाना आसान नहीं होता। टीकों से काफी हद तक इन संक्रमण से बचा जा सकता है।

धारणाएं और सच्चाई

धारणा: टीकों से रोग-प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है?
सच्चाई: वैक्सिन्स से व्यक्ति की रोगों से लड़ने की क्षमता में इजाफा होता है। शरीर बाहरी संक्रमणों का मुकाबला आसानी से कर पाता है।
धारणा: टीके एक बार लगवाना काफी है, इनकी नियमित या दो-तीन खुराक जरूरी नहीं
सच्चाई: चूंकि हर वर्ष वायरस के

प्रभाव में बदलाव होता है, इसलिए कुछ खास वैक्सिन्स को लगातार लेने से वायरस के नए प्रभाव से बचना संभव होता है।
धारणा: छोटी-मोटी बीमारियां या संक्रमण तो होते ही हैं, इनके लिए टीकों की आवश्यकता नहीं
सच्चाई: कुछ संक्रमणों से गंभीर बीमारियों का खतरा हो सकता है। पक्षाघात, नेत्रहीनता, मस्तिष्क संबंधी गंभीर बीमारियों के अलावा कुछ संक्रमण जानलेवा भी होते हैं।

ये टीके हैं जरूरी

फ्लू शॉट्स (इन्फ्लूएंजा)

फ्लू आमतौर पर हवा के जरिये फैलता है। खांसने, बात करने और सांस लेने से भी यह फैलता है। फेफड़ों के जरिये यह शरीर में प्रवेश करता है, जिससे बुखार, खांस, शरीर में दर्द जैसी शिकायत होती है। दवाओं से फायदा हो जाता है, पर कुछ को अस्पताल में भर्ती होना पड़ता है। बड़ी उम्र के लोगों में कई बार हालत गंभीर हो जाती है।

कब लगवाएं: छह महीने की उम्र के बाद कभी भी इस टीके को लगाया जा सकता है। इसे प्रतिवर्ष एक बार लगवाएं, क्योंकि हर साल इसमें नया वैक्सिन आता है। इसकी कीमत 600-700 रुपये है।

कैसे है जरूरत: बच्चों, बूढ़ों, गर्भवती स्त्री, डायाबिटीज, हृदय रोग या कैंसर से जुड़ा रहे मरीजों को यह टीका अवश्य लगवाना चाहिए।

टिटनेस

इसके बैक्टीरिया धूल-मिट्टी या वातावरण में होते हैं। चोट लगने पर धूल-मिट्टी के जरिये संक्रमण शरीर में फैल जाता है। इससे मांसपेशियों में दर्द और जबड़े में ऐंठन की शिकायत होती है।

कब लगवाएं: इस टीके को हर दस वर्ष में एक बार लगाया जाना चाहिए। यह टिटनेस संक्रमण से बचाता है। यह काफी सस्ता टीका है।

कैसे है जरूरत: सभी को लगवाना चाहिए। खासकर नाखून में कट लग जाए तो इसे जरूर लगवाएं।

निमोनिया (न्यूमोकोकल वैक्सिन)

हर साल निमोनिया और मेनिन्जाइटिस के कई मामले सामने आते हैं। खासतौर पर 60 की आयु पार कर

चुके लोगों को यह संक्रमण अधिक घेरता है। बीमारी के हिसाब से इसकी खुराक दी जाती है।

कब लगवाएं: 19 से 65 की आयु वर्ग के बीच इसे लगाना आवश्यक है।

कैसे है जरूरत: 65 की उम्र पार कर चुके लोगों को इसे जरूर लगवाना चाहिए। फेफड़ों संबंधी बीमारी हो तो इसे जरूर लगवाएं। डायाबिटीज, लिवर, किडनी की समस्या, अस्थमा और हृदय रोगियों को इसकी खुराक दी जानी चाहिए। इसकी कीमत 1100-1200 रुपये के बीच हो सकती है।

चिकन पॉक्स

यह संक्रामक रोग है। इससे त्वचा पर लाल चकत्ते पड़ जाते हैं। खुजली होने लगती है। गंभीर होने पर यह संक्रमण मस्तिष्क तक भी पहुंच सकता है। बचपन में इसका टीका नहीं लगा है तो बाद में भी इसे लगाया जा सकता है। आजकल इसके लिए हरपीज का वैक्सिन भी लगाया जाता है।

कब लगवाएं: इसे कभी भी लगवा सकते हैं। संक्रमण होने के 72 घंटे के भीतर भी इसे लगवा लिया जाए, तो यह काफी प्रभावकारी हो सकता है।

कैसे है जरूरत: यह टीका सबके लिए अनिवार्य है। खासतौर पर संतान की सोच रही महिलाओं, हेल्थकेयर सेक्टर में काम करने वालों को इसकी अधिक आवश्यकता होती है। 40 की उम्र के बाद इसके इन्फेक्शन की आशंका अधिक होती है। आमतौर पर इसकी दो खुराक दी जाती है। इसकी कीमत 3500 से 6000 रुपये तक हो सकती है।

हेपेटाइटिस ए-बी

इससे लिवर को ज्यादा नुकसान होता है। हेपेटाइटिस-ए, जहां खाने या पानी के जरिये फैलता है, वहीं हेपेटाइटिस-बी सेक्स संबंधों या रक्त के जरिये शरीर में प्रवेश करता है। गर्भवती स्त्री को होने वाला संक्रमण उसके बच्चे को भी हो सकता है।
कब लगवाएं: इसे कभी भी लगवाया जा सकता है।

एचपीवी

एचपीवी यानी ह्यूमन पपिलोमावायरस यौन संक्रमित रोग है, जिसके लक्षण आमतौर पर नजर नहीं आते। कई बार यह खुद ठीक हो जाता है, पर गंभीर स्थिति में इससे कैंसर (खासतौर पर सर्वाइकल कैंसर) का खतरा भी पैदा हो सकता है। एचपीवी वैक्सिन उस वायरस को निष्क्रिय करने में कारगर है, जो पुरुषों में श्रोत कैंसर और महिलाओं में सर्वाइकल कैंसर का कारण बनता है। इसके नतीजे 100 प्रतिशत तक सफल आए हैं।

कब लगवाएं: यह टीका 12 से 26 की उम्र तक कभी भी लग सकता है। सेक्सुअली सक्रिय जीवन से पहले ही इसे लगाया जाना चाहिए। हालांकि अब एफडीआई ने इसके लिए आयु सीमा 45 वर्ष तक कर दी है, लेकिन सही सलाह डॉक्टर से ही मिल सकती है। इसकी तीन खुराक दी जाती है। इनकी कीमत 3000 से 3500 रुपये के बीच हो सकती है।

कैसे है जरूरत: सेक्स संबंध बनाने वाले हर स्त्री-पुरुष को इस वैक्सिन की आवश्यकता होती है। यह टीका न सिर्फ एसटीडी बल्कि कैंसर के खतरों से भी बचाता है।

हेपेटाइटिस-ए की दो खुराक छह से 18 महीने के अंतराल पर दी जाती है, जबकि हेपेटाइटिस-बी की तीन खुराक होती हैं, जिन्हें आमतौर पर छह-छह महीने के अंतराल पर लगाया जाता है। हर 10 वर्ष के बाद एंटीबॉडीज टेस्ट कराएं और अगर जरूरत हो तो डॉक्टर की सलाह से बूस्टर डोज लें।

कैसे है जरूरत: यौन संबंधी सक्रिय लोगों के लिए यह जरूरी है। जो लोग समलैंगिक संबंधों में हैं, उनके लिए भी यह अनिवार्य है। हेपेटाइटिस-ए का टीका वे लगवाएं, जो लगातार यात्राएं करते हैं और गंभीर लिवर संबंधी परेशानियों से जुड़ा रहे हैं। मधुमेह रोगियों को यह टीका नहीं लगवाना चाहिए।

Fever (Hindustan: 20191004)

क्यों चढ़ता है बार-बार बुखार?

कुछ बुखार खास मौसम में होते हैं। सही उपचार मिलने पर पांच दिन से एक हफ्ते में ठीक भी हो जाते हैं। पर अगर जल्दी-जल्दी बुखार चढ़ रहा है तो इसकी अनदेखी न करें। यह किसी बीमारी का लक्षण भी हो सकता है। जानें दीपिका शर्मा से

वायरल, चिकनगुनिया या डेंगू बुखार के मरीजों की तादाद काफी लंबी है। वायरल बुखार तो आम है। सही उपचार मिलने पर कुछ दिनों में तबीयत सही भी हो जाती है। पर कुछ बुखार जल्दी-जल्दी चढ़ते हैं। ऐसे में कारण जान लेना जरूरी है। लेडी हार्डिंग मेडिकल कॉलेज के पूर्व वाइस प्रिंसिपल डॉ. एस के शर्मा के अनुसार, 'बुखार का मुख्य कारण संक्रमण होता है। कुछ संक्रमण सफेद रक्त कोशिकाओं के सम्पर्क में आकर मस्तिष्क के तापमान केंद्र पर असर डालते हैं। बुखार का मतलब ही यह है कि संक्रमण के कारण उत्पन्न हुई गड़बड़ी से लड़ने के लिए शरीर का अंदरूनी तंत्र सक्रिय हो गया है, जिसके कारण शरीर का तापमान बढ़ने लगता है। रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होती जाती है। आमतौर पर हम तेज बुखार होने पर डॉक्टर से सलाह लेते हैं, पर हल्के बुखार में ज्यादातर लापरवाही बरत जाते हैं। जल्दी-जल्दी चढ़ने वाला हल्का बुखार किसी बड़ी बीमारी का संकेत हो सकता है। ऐसे में ओटीसी दवाओं या घरेलू उपायों से उपचार के बजाय डॉक्टर से मिलें।'

बार-बार आने वाला बुखार व कारण

मियादी बुखार

यह बुखार साल्मोनेला टाइफ़ी बैक्टीरिया से संक्रमित खानपान से होता है। पीड़ित व्यक्ति के मल-मूत्र से दूषित हुए पानी से भी मियादी बुखार होने की आशंका रहती है। इसे टाइफ़ॉइड बुखार भी कहते हैं। अगर बुखार सप्ताह भर से ज्यादा हो जाए तो टाइफ़ॉइड टेस्ट करा लेना चाहिए। सही उपचार नहीं होने पर समस्या बढ़ जाती है। अचानक ही तेज बुखार होना, बदन दर्द, कमजोरी, सिर व पेट दर्द, कम भूख लगना, बच्चों में दस्त, बड़ों में कब्ज, रोग अधिक बढ़ने पर आंतां में अल्सर की समस्या हो सकती है।

आर्थाइटिस बुखार

यह एक ऑटो इम्यून बीमारी है। इसमें शरीर का रोग प्रतिरोधक तंत्र, अपने शरीर की ही स्वस्थ कोशिकाओं पर हमला करने लगता है। जोड़ों में जकड़न, बार-बार बुखार आना, वजन कम होना, भूख कम लगना, त्वचा पर चकत्ते आना इसके मुख्य लक्षण हैं।

फेफड़ों की समस्या होने पर

बढ़ते प्रदूषण के कारण फेफड़े संबंधी समस्या बढ़ी है। यह बीमारी धीरे-धीरे बढ़ती है, इस कारण कई बार व्यक्ति को पता भी नहीं चल

कैसे बचे

- डॉक्टर को दिखाएं। खुद से एंटीबायोटिक दवाएं न खाएं।
- बुखार होने पर दिन में कम से कम तीन बार थर्मामीटर से बुखार नाप लें। इससे डॉक्टर को इलाज में मदद मिलेगी।
- कोल्ड स्पॉन्जिंग सामान्य पानी से करें। बर्फीला ठंडा पानी खून की नलियों को सिकोड़ देता है। इस कारण शरीर और ठंडे कपड़े के बीच तापमान का आदान-प्रदान नहीं हो पाता और बुखार तेजी से नहीं उतरता। गीले कपड़े को निचोड़कर गला, माथा, पेट और जांघ के सधि स्थल पर रखते जाएं।
- कभी कभी हड्डियों में दर्द बना रहता है। कई लोग इसे हड्डियों का बुखार कहते हैं और दवाएं खाते रहते हैं। किसी भी बड़ी बीमारी की आशंका से बचने के लिए जांच कराएं। यह हड्डियों की टीबी व कैंसर का संकेत हो सकता है।
- बुखार में ढंग से देखभाल नहीं करने पर भी इसके दोबारा होने की आशंका बढ़ जाती है। स्वस्थ जीवनशैली अपनाएं। साफ-सफाई का ध्यान रखें।



पाता। आमतौर पर शुरुआत में खांसी, कफ, सीने में दर्द और बुखार के लक्षण सामने आते हैं। ध्यान न देने पर यही टीबी और फेफड़ों के कैंसर का रूप ले लेता है।

कैंसर

कैंसर में शरीर के किसी भी हिस्से की कोशिकाएं अनियंत्रित रूप से विभाजित होकर बढ़ने लगती हैं। वजन में कमी, बार-बार बुखार होना, भूख में कमी, हड्डियों में दर्द, खांसी या मुंह से खून आना, बहुत अधिक पसीना आने के तौर पर लक्षण दिखते हैं।

एड्स में बुखार आना

एचआईवी का वायरस सबसे पहले शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को कम करता है। अक्सर मरीज कई तरह के रोगों से जूझता रहता है। हर 3-4 दिन में तेज बुखार आना, वजन कम होना, तनाव, उल्टी होना, डायरिया, त्वचा पर लाल निशान, मांसपेशियों व जोड़ों में दर्द, नाखून में बदलाव आना आदि इसके लक्षण हैं।

दीपिका शर्मा



Climate Change

Individuals and societies are waking up to climate change (Hindustan Times: 20191004)

<https://epaper.hindustantimes.com/Home/ArticleView>

It is no longer an issue of the future, or confined to the UN. The challenge is now in changing the way we live

As the dust settles from last week's much-discussed United Nations Climate Action Summit, the most remarkable ensuing climate news has little to do with the activities in New York. The summit followed a predictable path, with a mix of encouraging country and private sector pronouncements and a conspicuous silence from many large emitters. 77 countries, 10 regions, and 100 cities committed to net-zero carbon emissions by 2050. The United States, Australia, and Brazil, on the other hand, were absent from the stage. Instead, the unexpected and inspiring news is ancillary to the summit.

We are witnessing a global wave of climate strikes that are demanding more action on the climate emergency. The largest of these had six million people, from countries around the world. United in their message, they momentarily erased diplomatic boundaries between the developed and developing nations, which have long beset international climate negotiations. The images spanning Jakarta, Nairobi, Mexico City, Sao Paulo — and, closer home, Chennai, Mumbai, New Delhi, Kolkata — are striking, not least because these are cities with multiple development challenges and seemingly more immediate priorities (jobs, electricity, housing), as opposed to the more abstract and longer-term concerns of climate change. But the clear message from this growing public sentiment is that protecting the environment is no longer an issue for the future, nor is it one which is solely salient in UN corridors. Rather, it has pressing effects on everyday lives. Could this shift mean we are moving towards a tipping point in how climate actions are undertaken?

The reason it is important to ask this question is that tackling the climate crisis is not a task for heads of countries alone. In fact, any success towards the global temperature 2°Celsius target, laid out in the Paris Agreement, is inextricably dependent on how actions towards this goal will filter down from nations to cities, households, and individuals. As the Intergovernmental Panel on Climate Change (IPCC) 1.5°C report states, there are only two pathways to achieve the global temperature target — one, by drastically reducing global energy demand, or, two, by the use of negative emission technologies (including bio-energy with carbon capture and storage), which reduce carbon dioxide concentration in the atmosphere. While the latter technologies are almost entirely in the demonstration phase without being available at scale, the former option — reduction in energy demand — is both technologically feasible and cost-effective. The catch, however, is that it requires untangling the complex ways in which energy consumption is embedded in our daily lives.

The majority of energy services are used within four broad categories. These are in buildings, transportation, food, and commodities. The provision of services within each of these areas is core to a better quality of life, which is important for regions starting from a low base of development. At the same time, the scale of current and future energy consumption poses difficult challenges for climate change because of its trade-offs with higher greenhouse gas emissions. For instance, cooling, especially from air conditioners, is expected to grow exponentially to require the equivalent of all electricity demand in the US and Germany today. Reducing energy demand, thereby, requires a fundamental examination of our everyday consumption patterns, and in turn, of our lifestyles and underlying social norms. Changing these is arguably a more difficult task than an ostensible technological fix to remove carbon dioxide from the atmosphere.

Yet, simultaneously, the opportunity to tackle climate change by focusing on energy demand also locates the solution space within our everyday lives. The use of energy efficient appliances, reduced meat consumption, public transport use, and the reduction of waste, are key examples. These solutions are even more relevant for emerging economies, where most of the infrastructure — which shapes preferences — is yet to be built.

The latest science tells us that we are already at 1.1°C of warming, and at the current rate, the earth is 15-20 years away from reaching 1.5°C. Halting temperature increase well below 2°C at this stage will require a range of solution pathways. Within this set, demand-side options are well understood and widely available. But their uptake and acceptability is difficult because they require more than technological shifts, and instead, call for a transition in our material realities and deeply embedded individual behaviours. Perhaps the most heartening message from the recent climate news is that, as individuals and societies, we are beginning to recognise that tackling the climate emergency is one in which we can all play a part. As geographer Mike Hulme has succinctly said, climate change is not so much a discrete problem to be solved as it is a condition under which human beings are to make choices about the way we live and govern ourselves.

Radhika Khosla is research director, Oxford India Centre for Sustainable Development, and senior researcher, Smith School of Enterprise and the Environment, University of Oxford.

The views expressed are personal

Health Insurance

2.2 cr health insurance beneficiaries in state (Hindustan Times: 20191004)

<https://www.tribuneindia.com/news/punjab/2-2-cr-health-insurance-beneficiaries-in-state/842185.html>

If the figures mentioned on government billboards are to be believed, almost the entire Punjab has been enrolled for the Sehat Bima Yojana. *tribune Photo: Sarabjit Singh*

The publicity hoardings about various schemes put up across the state recently by the government are flashing some astonishing figures. Going by the figures, 2.2 crore of the state's nearly 3 crore population has been covered under the Sehat Bima Yojana, which means 73 per cent of the population of Punjab is under its ambit.

Another figure reads that 1.37 crore beneficiaries are covered under the Atta-Dal scheme, which implies that as many as 45 per cent Punjabis have annual family income less than Rs 60,000. Officials say their figures are very conservative and well within the parameters defined by the Central Government.

Anindita Mitra, Director Public Relations and Director Food Supplies, says, "The Centre has frozen the limit of number of beneficiaries of the scheme in Punjab to 1.41 crore. This is because the government has fixed a limit of covering up to 54 per cent rural population and upto 49 per cent urban population under the scheme. We can incorporate 4 lakh more beneficiaries under the scheme."

Officials said 36 lakh families of Punjab had been covered under it. "We have been continuously deleting undue beneficiaries. Our survey will end in December," Mitra said.

Monty Sehgal, a BJP leader, asked, "The figures seem forged to appease the masses. There cannot be so many families in Punjab which are thriving on less than Rs 5,000 per month. It is a vote game. Politicians do not realise that they are making the people dependent on them. Votes never get translated by freebies. More importantly, if it is a Centre-funded scheme, how can the Punjab CM take the entire credit?"

SAD MLA Pawan Tinu asked, "When our government left, we had covered 35 lakh families. At that time, the Congress leaders were saying that we have exaggerated the figures and the real beneficiaries should be far less. So, they got verification started which is yet to be completed. Rather than doing any deletion, they added 1 lakh more families. So, our stand gets vindicated."

On figures related to Sehat Bima Yojana, a public relations officer pointed out, "When 36 lakh blue card beneficiaries have been included, 4.94 lakh J-form holding farmer families have been covered, 2.8 lakh small farmers, more than 2.38 lakh registered construction

workers, 46,000 small traders and 4,500 journalists have been covered, it is obviously like getting almost the entire Punjab covered.”

Plastic Waste (The Asian Age: 20191004)

<http://onlinepaper.asianage.com/articledetailpage.aspx?id=13872466>

■ Floating boom creator says it retained debris from Great Pacific Garbage Patch

Ocean cleanup device ‘collects’ plastic

A mission to rid the Pacific Ocean of plastic garbage, which has accumulated for decades, has begun. About 600,000 to 800,000 metric tonnes of fishing gear is abandoned or lost at sea each year. Another 8 m tonnes of plastic waste flows in from beaches.

A huge floating device designed by Dutch scientists to clean up an island of rubbish in the Pacific Ocean has successfully picked up plastic from the high seas for the first time.

Boyan Slat, the creator of the Ocean Cleanup project, tweeted that the 600-metre-long free-floating boom had captured and retained debris from what is known as the Great Pacific

Garbage Patch. Alongside a picture of the collected rubbish, which includes a car wheel, Slat wrote: “Our ocean cleanup system is now finally catching plastic, from one-ton ghost nets to tiny microplastics! Also, anyone missing a wheel?”

Ocean currents have brought a vast patch of waste together halfway between Hawaii and California, where it is kept in rough formation by an ocean gyre, a whirlpool of currents. It is the largest accumulation of plastic in the world’s oceans.

The vast cleaning system is designed to not only collect discarded fishing nets and large visible plastic objects, but also micro-plastics. The plastic barrier

floating on the surface of the sea has a three metre-deep screen below it, which is intended to trap some of the 1.8-tonne pieces of plastic without disturbing the marine life below.

The device is fitted with satellites and sensors so it can communicate its position to a vessel that will collect the gathered rubbish every few months.

Slat told a press conference in Rotterdam that the problem he was seeking to solve was the vast expense that would come with using a trawler to collect plastics. He said: “We are now catching plastics ... After beginning this journey seven years ago, this first year of testing

in the unforgivable environment of the high seas strongly indicates that our vision is attainable and that the beginning of our mission to rid the ocean of plastic garbage, which has accumulated for decades, is within our sights.

— Agencies

Smoking

How to help people with cancer stop smoking (Medical News Today: 20191004)

<https://www.medicalnewstoday.com/articles/326546.php>

Helping people with cancer to stop smoking is vital because quitting improves health outcomes significantly. A recent study finds that nearly 46% of people with cancer quit smoking through a tailored tobacco treatment program.

A recent study assesses a smoking intervention for people with cancer.

It is no secret that smoking is bad for health — smoking, and exposure to tobacco top the causes of premature, preventable death in the United States.

According to the Centers for Disease Control and Prevention (CDC), smoking causes 480,000 deaths a year, or approximately 1 in 5 premature deaths.

Of those deaths, 36% are due to cancer, including cancers of the lung, mouth, bladder, colon, and pancreas; smoking takes its toll on almost every organ in the body.

Once someone receives a cancer diagnosis, they may still find quitting tobacco challenging. However, giving up could significantly improve their outcome.

"[Q]uitting at [the] time of diagnosis increases the chance of survival by 30% to 40%. Patients also have less chance of a recurrence or secondary cancer if they quit," explains Diane Beneventi, Ph.D., one of the authors of a recent study.

Testing the Tobacco Treatment Program

The recent study concludes that a comprehensive treatment program can help people diagnosed with cancer give up smoking successfully and stay away from tobacco.

Researchers at the MD Anderson Cancer Center at the University of Texas in Austin analyzed 3,245 smokers who took part in their Tobacco Treatment Program from 2006–2015.

The intervention includes a customized program geared to the individual needs of the nearly 1,200 people who agree to participate each year. Participants are offered nicotine replacement therapy, medication, and emotional support through counseling sessions.

Program director, Dr. Maher Karam-Hage, explains what the Tobacco Treatment Program entails:

"We tailor nicotine replacement therapy, non-nicotine medications, and [a] combination of these as recommendations to each individual and provide support through behavioral counseling sessions over 8–12 weeks following their initial consultation."

Depression may be on the rise among people who used to smoke

A recent study concludes that people who quit tobacco are more likely to develop depression or adopt another habit.

When someone who has a diagnosis of cancer self-identifies as a smoker, the clinic offers the quit smoking program free of charge.

MD Anderson can treat people free of charge because the Texas Tobacco Settlement Fund primarily covers the \$1,900 to \$2,500 costs through the Tobacco Master Settlement Agreement.

The researchers recently published their results in JAMA Network Open.

The researchers analyzed the results of the individuals at 3, 6, and 9 months after they joined the program and noted that the rate of cessation was 45.1%, 45.8%, and 43.7%, respectively.

Although the study did not include a control group with which to compare the results, the researchers note that other programs encouraging cessation have only managed quit rates of around 20%.

"Patients deserve the absolute best opportunity we can give them to quit smoking. Based on our data, we recommend offering comprehensive smoking cessation to cancer patients as a clinical standard of care."

Lead author Paul Cinciripini, Ph.D.

Important findings

Giving up smoking helps the body to heal after treatments, such as surgery or chemotherapy, and lessens side effects. Quitting can also lower the risk of recurrence or secondary cancer.

"Longer term, [people] will enjoy a better quality of life. Quitting is crucial for cancer patients," says Beneventi.

Due to the successful outcome of the study, the authors are campaigning for comprehensive tobacco treatment programs within the cancer treatment arena. They want to make sure that people with cancer who smoke achieve the best possible results.

"If we want to give patients the absolute best opportunity to treat their cancer, why shouldn't we give them the best smoking cessation, too? It's the right thing to do and worth the investment."

Paul Cinciripini, Ph.D

The CDC estimate that 14 percent of people in the U.S. aged over 18 smoke. Of these 34.3 million people, nearly half have a smoking-related illness. The researchers believe that other states should look at a similar funding strategy to encourage people to quit smoking.

Smokers, regardless of age, can significantly improve their outcomes and lower their risk of disease, including cancer, by giving it up.

Cardiovascular

Drug that targets body clock may prevent heart attack damage (Medical News Today: 20191004)

<https://www.medicalnewstoday.com/articles/326545.php>

A preclinical study in mice has tested a new method that could prevent the scarring that occurs after a heart attack and thus prevent heart failure. The researchers have used a drug to target aspects of the body clock that trigger harmful immune responses.

Researchers are developing a treatment that may promote heart muscle healing after a heart attack and prevent associated heart failure.

According to the Centers for Disease Control and Prevention (CDC), someone in the United States experiences a heart attack every 40 seconds.

In this medical emergency, the blood flow to the heart becomes obstructed, stopping the organ from functioning normally and damaging some of its muscle tissue.

After a heart attack, as the heart tissue begins to heal, scar tissue forms and is unable to contract and relax as well as healthy tissue.

With time, this may lead to heart failure, in which the heart becomes unable to pump blood effectively.

While various treatments can help individuals with heart failure manage their condition, there is no cure that can reverse it. But what if doctors were able to prevent scar tissue from forming after a heart attack and thus make heart failure less likely?

This is precisely what a team of researchers from the University of Guelph, in Ontario, Canada, are working toward. In a preclinical study in mouse models, the research team has tested a new method that aims to prevent the formation of scar tissue in the heart.

New approach produces promising results

In a study paper that appeared today, in *Nature Communications Biology*, Prof. Tami Martino and Cristine Reitz, a doctoral researcher at Guelph, explain that they have used a research drug called SR9009 to target aspects of the circadian clock, or body clock.

This "clock" regulates the body's automatic functions, such as breathing, as well as other more subtle mechanisms, including some immune system responses. When it comes to heart health, circadian mechanisms control, among other things, the ways in which this organ responds to damage and repairs itself.

In the current research, Prof. Martino and Reitz used SR9009 to block the expression of certain genes that play a role in triggering harmful immune responses that eventually lead to the formation of scar tissue following a heart attack.

Omega-3 fish oil supplements may lower heart attack risk

A meta-analysis of recent trial data indicates that omega-3 supplements could help prevent heart attacks.

To test this approach, the investigators administered the drug to mice and found that SR9009 helped reduce NLRP3 inflammasome production. This is an intracellular sensor that reacts to danger signals after a heart attack and contributes to scarring.

The researchers' experiments showed that, when administered within hours of a heart attack alongside conventional medication, the drug led to lower inflammation and better repair of the heart muscle. In fact, the team notes, the approach almost made it look as if a heart attack had not even occurred.

This approach, the investigators observe, might, in the future, allow individuals to avoid having to take heart medication for the rest of their lives.

"No scar, no heart damage, no heart failure — people can survive heart attacks because the heart won't even be damaged," says Prof. Martino.

"We were amazed to see how quickly it worked and how effective it was at curing heart attacks and preventing heart failure in our mouse models of the disease."

Prof. Tami Martino

Besides being a promising therapy for heart attack, the new method, the researchers argue, could help mitigate harmful inflammation in other medical scenarios, as in the case of organ transplants, traumatic brain injury, or stroke.

"What we are discovering is that the circadian clock mechanism is important, not just for heart health but also for how to heal from heart disease," says Prof. Martino.

"Circadian medicine is truly a promising new field that will lead to longer, healthier lives," she adds.

Hypertension

High blood pressure: Herbal remedies may inspire future treatments (Medical News Today: 20191004)

<https://www.medicalnewstoday.com/articles/326517.php>

People have used herbs as medicine for thousands of years. Today, with medical researchers continually hunting for better alternative treatments, some are revisiting these remedies. A recent study looks at herbs that people believe can treat hypertension.

Lavender was one of the plants that the scientists tested in the recent study.

Currently, hypertension affects an estimated 1 in 3 adults in the United States.

Although dietary and lifestyle changes can sometimes be sufficient, medication is necessary in some cases.

Antihypertensive medications work well for some people but not for others, and the side effects can be unpleasant.

For these reasons, researchers are keen to find innovative ways to tackle the growing issue of hypertension.

Some scientists are turning back the clock and looking to ancient herbal remedies. Humans have been self-medicating with the herbs that they find since before history began.

The fact that people have used these treatments for millennia is certainly not evidence that they are effective, but they are surely worth a second look.

Researchers from the University of California, Irvine recently zeroed in on a group of plants that have, historically, been a treatment for hypertension. They published their findings in Proceedings of the National Academy of Sciences.

Diverse plants

The scientists took herbal extracts from a diverse range of unrelated plants, including lavender, fennel seed extract, basil, thyme, marjoram, ginger, and chamomile.

Under the leadership of Prof. Geoff Abbott, Ph.D., they identified a bioactive trait that all of the extracts shared. This trait, the scientists believe, might help explain why some herbs appear to have mild antihypertensive properties.

Does lavender really help with anxiety?

A recent study suggests that one fragrant compound in lavender might reduce symptoms of anxiety.

Specifically, they found that these herbs activate a particular potassium channel called KCNQ5. This potassium channel and others are present in the vascular smooth muscles — the muscles that line blood vessels.

When vascular smooth muscles contract, blood pressure increases; when they relax, blood pressure drops. The activation of KCNQ5 results in the relaxation of these muscles. The authors think that this might help explain some herbs' antihypertensive properties.

"We found KCNQ5 activation to be a unifying molecular mechanism shared by a diverse range of botanical hypotensive folk medicines."

Prof. Geoff Abbott, Ph.D.

The researchers also tested a range of other plants that research has not shown to reduce blood pressure, such as wheatgrass and parsley. In these cases, they found no activation of KCNQ5.

Not all herbs are equal

When they compared plant species, the researchers found differing levels of KCNQ5 activity. "Lavandula angustifolia, commonly called lavender, was among those we studied," Prof. Abbot explains. "We discovered it to be among the most efficacious KCNQ5 potassium channel activators, along with fennel seed extract and chamomile."

Next, the scientists drilled down to determine which plant compound is responsible for activating the potassium channel.

They isolated a chemical called aloperine, which is an alkaloid. In a further set of experiments, they demonstrated that aloperine opens KCNQ5 by binding to the foot of the potassium channel.

Interestingly, current medications do not target the KCNQ5 channel. Spotting this gap in the drug market, Prof. Abbott hopes that the "discovery of these botanical KCNQ5-selective potassium channel openers may enable development of future targeted therapies for diseases including hypertension."

Of course, the road that runs between identifying a mechanism and getting a drug to market is long. It is also worth noting that the KCNQ group of receptors are relative newcomers and, as such, scientists do not yet know the full range of their functions.

However, because hypertension is so widespread, and because it increases the risk of cardiovascular diseases, such as stroke, there is likely to be significant interest in taking these ideas to the next stage.

For now, though, people should not switch their current hypertension treatments for herbal remedies.

Sleep Disorder

Sleep duration predicts death risk in diabetes and hypertension (Medical News Today: 20191004)

<https://www.medicalnewstoday.com/articles/326538.php>

A new study analyzing the data of more than 1,600 adults found that people with hypertension or type 2 diabetes had a higher risk of death from stroke or heart disease if they slept for less than 6 hours per night.

Sleeping for less than 6 hours each night could put people with diabetes or hypertension at a higher risk of premature death.

Type 2 diabetes and hypertension (high blood pressure) are two very common health conditions around the world.

While there are tried and true ways of managing them, these conditions can increase a person's risk of developing heart disease and experiencing a stroke.

Recently, a study that featured in the Journal of the American Heart Association found that one factor — sleep — may play a significant role for people with these health conditions.

"Our study suggests that achieving normal sleep may be protective for some people with these health conditions and risks," says lead author Julio Fernandez-Mendoza, Ph.D., from the Pennsylvania State College of Medicine in Hershey.

"However," he cautions, "further research is needed to examine whether improving and increasing sleep through medical or behavioral therapies can reduce risk of early death."

Is short sleep duration 'a useful risk factor?'

In the new study, Fernandez-Mendoza and team analyzed the data of 1,654 participants — 52.5% of whom were women — between the ages of 20 and 74 years. All of the participants had enrolled in the Penn State Adult Cohort.

The researchers split the participants into two categories according to cardiometabolic risk. The participants in one group had stage 2 hypertension or type 2 diabetes, while those in the other group had received a diagnosis of or treatment for heart disease or stroke.

Moreover, the researchers had access to data regarding the participants' sleep duration, as this cohort had agreed to a 1-night evaluation in a sleep laboratory between 1991 and 1998. They also had access to death records and associated documentation for the years from 1992 through to 2016.

The team's analysis revealed that of the 512 people who had died by 2016, about two-fifths had died because of causes relating to heart disease or stroke, while close to one-quarter had died following a cancer diagnosis.

What caught the investigators' attention was the fact that among individuals who had hypertension or type 2 diabetes, the risk of death due to heart disease or stroke was two times higher in those who slept for less than 6 hours per night than in those who slept for 6 hours or more.

For the individuals with one of these two health conditions who slept for longer, the increased risk of premature death was not significant.

Additionally, participants in the heart disease and stroke group who slept for less than 6 hours a night had almost three times the risk of dying from cancer-related causes.

"Short sleep duration should be included as a useful risk factor to predict the long term outcomes of people with these health conditions and as a target of primary and specialized clinical practices.

Julio Fernandez-Mendoza, Ph.D.

"I'd like to see policy changes so that sleep consultations and sleep studies become a more integral part of our healthcare systems. Better identification of people with specific sleep issues would potentially lead to improved prevention, more complete treatment approaches, better long term outcomes, and less healthcare usage," suggests Fernandez-Mendoza.

Heart attack risk higher in those who sleep too little or too much

New evidence indicates that people who do not get the ideal amount of sleep may have a higher risk of heart attack.

While this research adds to the evidence that sleep plays a crucial role in the maintenance of health and well-being, the study authors do admit that their current analysis has some limitations.

The chief limitation, they note, is the fact that they only had access to data on the duration of a single night's sleep.

As this data came from laboratory observations, they caution that there is a possibility that the participants' normal sleep patterns may have been different than usual because they were in an unfamiliar environment.

"Nevertheless, the associations found for those other clustered non-[cardiovascular and cerebrovascular disease] causes of death had the expected [hazard ratios] and provided confidence about the reliability and validity of our findings," the authors argue in their study paper.

Dental Health

Tooth loss linked to higher risk of heart disease (Medical News Today: 20191004)

<https://www.newkerala.com/news/read/223164/tooth-loss-linked-to-higher-risk-of-heart-disease.html>

Dubai, Oct 3 : Researchers have found that adults who have lost teeth due to non-traumatic reasons might have a higher risk of developing cardiovascular disease (CVD).

"If a person's teeth fall out, there may be other underlying health concerns. Clinicians should be recommending that people in this age group receive adequate oral health care to prevent the diseases that lead to tooth loss in the first place and as potentially another way of reducing risk of future cardiovascular disease," said study lead author Hamad Mohammed Qabha, MBBS from Imam Muhammad Ibn Saud Islamic University.

The causal association between oral disease and cardiovascular disease is not well known, so researchers in this study conducted a secondary analysis of the 2014 Behaviour Risk Factor Surveillance System that looked at tooth loss not caused by trauma, as well as cardiovascular disease, including heart attack, angina and stroke.

The study included 316,588 participants from the US and territories between the ages of 40-79.

Overall eight per cent were edentulous (had no teeth) and 13 per cent had cardiovascular disease.

The percentage of people who had cardiovascular disease and were edentulous was 28 per cent, compared to only seven per cent who had cardiovascular disease but did not have missing teeth.

In addition to edentulous participants, those who reported having one to five missing teeth or six or more, but not all, missing teeth were also more likely to develop cardiovascular disease, even after adjusting for other factors such as body mass index, age, race, alcohol consumption, smoking, diabetes and dental visits.

The study was scheduled to be presented at the ACC Middle East Conference 2019 together with the 10th Emirates Cardiac Society Congress on October 3-5 in Dubai.

Alcohol

Why aspiring parents should avoid drinking alcohol (Medical News Today: 20191004)

<https://www.newkerala.com/news/read/222853/why-aspiring-parents-should-avoid-drinking-alcohol.html>

Beijing, Oct 3 : Researchers have found that drinking alcohol three months before pregnancy or during the first trimester was associated with a 44 per cent raised risk of congenital heart disease for fathers and 16 per cent for mothers.

Binge drinking, defined as five or more drinks per sitting, was related to a 52 per cent higher likelihood of birth defects for men and 16 per cent for women.

Both aspiring parents should avoid drinking alcohol ahead of conception to protect against congenital heart defects, according to the study published in the European Journal of Preventive Cardiology.

"Binge drinking by would-be parents is a high risk and dangerous behaviour that not only may increase the chance of their baby being born with a heart defect, but also greatly damages their own health," said study author Jiabi Qin, from Central South University in China.

The results suggested that when couples are trying for a baby, men should not consume alcohol for at least six months before fertilisation while women should stop alcohol one year before and avoid it during pregnancy.

For the study, the researchers compiled the best data published between 1991 and 2019, which amounted to 55 studies including 41,747 babies with congenital heart disease and 297,587 without.

The analysis showed that a nonlinear dose-response relationship between parental alcohol drinking and congenital heart diseases.

"We observed a gradually rising risk of congenital heart diseases as parental alcohol consumption increased. The relationship was not statistically significant at the lower quantities," Qin said.

Regarding specific defects, the study found that compared to abstinence, maternal drinking was correlated to a 20 per cent greater risk of tetralogy of Fallot, a combination of four abnormalities in the heart's structure.